International Journal of Sanskrit Research 2018; 4(5): 78-80

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2018; 4(5): 78-80
© 2018 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 19-07-2018
Accepted: 20-08-2018

सीमा गुप्ता
शोध – छात्रा, संस्कत – विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली, भारत

Correspondence
सीमा गुप्ता
शोध – छात्रा, संस्कत – विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली, भारत

आचार्यविजय काव्य में जीवन–मूल्य

सीमा गुप्ता

प्रस्तावना

आचार्यविजय गद्य काव्य कें रचयिता हरिकृष्ण शास्त्री हैं। इस गद्य काव्य में द्रारा हरिकृष्ण शास्त्री ने रामानन्द

सप्रदाय कें अग्रणीय जगद्गुरू रामानन्दाचार्य के समग्र जीवन, आदर्शो एवं सिद्धांतो का विवेचन किया है। प्रस्तुत लेख में आचार्यविजय गद्य काव्य में प्रतिपादित जीवन मूल्यों पर प्रकाश डाला गया है तथा उनकी जीवन मूल्यों से ओत–प्रोत शिक्षाओं को सार रूप में प्रस्तुत किया गया हैं।

जगद्गुरू रामानन्दचार्य का सूंपूर्ण जीवन जीवन–मूल्यों की अभिवृद्धि करने में ही तत्पर रहा । मनुष्यों के जीवन के लिए महत्वपूर्ण मूल्य 'अंहिसा परमो धर्मः' इस वेद कथन का उन्होंने सदैव पालन किया तथा लोगो को भी इसके लिए प्रेरणा दी जिससे कि तत्कालीन समाज में देवी को पशू बलि को अर्पण करने की जो प्रथा थी वह समाप्तप्रायः हो गई थी । 'जात–पात पूछे नहि कोई हरि को भजे सो हरि का होई' इस कथन के द्वारा सभी मनुष्यों को बिना किसी भेद भाव के एक साथ मिलकर रहने का उपदेश दिया तथा सभी को भगवान की भक्ति का अधिकार प्रदान किया । उन्होने एकता, प्रेम, सद्भवना, तथा त्याग प्रभृति मूल्यों का संदेश दिया जिसे सभी लोगों में इन मूल्यों का विकास हो सके। रामानन्दचार्य के त्यागपूर्ण जीवन से सभी मनुष्यों को उनके समान ही देश एवं समाज कल्याणार्थ जीवन जीने की प्रेरणा प्राप्त होती है।

संस्कृत साहित्य में काव्य का महत्त्वपूर्ण स्थान है। काव्य शब्द से तात्पर्य कवि के कर्म अथवा कृति से है। काव्य रसमय, भावमय तथा आनन्दमय होता है। कवि अपनी कल्पना से जिस काव्य रूपी सृष्टि का निर्माण करता है, वह ब्रह्मा द्वारा रचित सृष्टि से भी उत्कृष्ट है। ब्रह्मा द्वारा रचित सृष्टि नियति के नियमों से सुखदुःखात्मक तथा मधुरकषायादि षड्रसों से युक्त है, परन्तु कवि की रचना नियति के नियमों से मुक्त, सुख–दुख से रहित केवल आनन्दमय तथा श्रृंगारादि नव रसों से युक्त है–

> ''नियतिकृतनियमरहितां ह्लादैकमयीमनन्यपरतन्त्राम्।
> नवरस रुचिरां निर्मितिमादधती भारती कवेर्जयति।।'';काव्यप्रकाश1/1

आनन्द प्रदान करने वाले काव्य को काव्याचार्यों ने दो वर्गों में विभाजित किया है – श्रव्य काव्य तथा दृश्य काव्य। संस्कृत साहित्य का प्रत्येक काव्य जीवन–मूल्यों की पाठशाला है। संस्कृत साहित्य में आर्ष काव्य रामायण एवं महाभारत से लेकर आधुनिक संस्कृत साहित्य में जीवन–मूल्य का सर्वाधिक स्थान है। रामायण में तो नैतिक मूल्यों की पराकाष्ठा के दर्शन होते है। संस्कृत वाड्.मय में आध्यात्मिक, नैतिक, सामाजिक, चारित्रिक, पारिवारिक आदि जीवन–मूल्य की अवधारणा उसी प्रकार अनुभूत होती है, जिस प्रकार क्षुधा–पूर्ति के लिए भोजन की।

मूल्य एक अमूर्त सम्प्रत्यय है, इसका सम्बन्ध मनुष्य के भावात्मक पक्ष से होता है, जो कि उसके व्यवहार को नियंत्रित एवं निर्देशित करता है। व्यक्ति में सामाजिक एवं नैतिक मूल्यों का विकास बहुत आवश्यक है जिससे मनुष्य का चहुँमुखी विकास हो सके।

मूल्य शब्द संस्कृत की 'मूल' धतु में 'यत्' प्रत्यय लगने से बना है, जिसका अर्थ, कीमत, मजदूरी आदि होता है। वास्तव में वह सिद्धांत जो मनुष्य को मनुष्य बनाते हैं, हम उन्हीं को जीवन–मूल्य कहते है। सदाचरण एवं सद्गुण स्वयं ही मूल्य को निरूपित एवं उद्घाटित करते है। गुण स्वयं में मूल्यवान होने से मूल्य शब्द का ही समानार्थक बन जाता है।

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। वह समाज में रहकर अपनी उन्नति एवं समृद्धि के लिए प्रयत्नशील रहता है। मनुष्य अपनी सांस्कृतिक एवं भौतिक उन्नति के लिए अनेक लोगों पर एवं समाज पर निर्भर रहता है। एकांकी मनुष्य अपना अभ्युदय करने में समर्थ नहीं होता।

समाज में विभिन्न मनुष्य भिन्न–भिन्न क्रिया–कलापों में लगे हुए एक–दूसरे की आवश्यकतापूर्ण करने में सहायक होते हैं। इंसान के जीवन की सबसे पहली पाठशाला उसका अपना परिवार होता है और परिवार समाज की एक छोटी इकाई है। परिवार के बाद विद्यालय, जहाँ से उसे शिक्षा हासिल होती है। इस प्रकार परिवार, विद्यालय एवं समाज द्वारा एक व्यक्ति में सामाजिक गुणों एवं मानव मूल्यों का विकास होता है। जीवन–मूल्य मानव जीवन को अधिक से अधिक व्यवस्थित बनाते है। जीवन–मूल्य मानव जीवन में अनेक प्रकार से कार्यान्वित होते है। जैसे – वैयक्तिक, पारिवारिक, सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक इत्यादि। किसी भी मनुष्य के जीवन में मूल्यों का अहम योगदान रहता है, क्योंकि इन्हीं के आधर पर अच्छा–बुरा या सही–गलत की परख की जाती है। किसी भी देश की भौतिक प्रगति को उस देश का शरीर कहा जा सकता है, जबकि उसमें प्राण तत्त्व का संचार करने वाले जीवन–मूल्य ही है। यह जीवन मूल्य, व्यक्ति, समाज, जाति एवं देश के लिए बहुत महत्त्वपूर्ण है।

किसी देश का साहित्य भी उस देश के समाज की परंपराओं, मूल्यों का दर्पण होता है। भारतीय संस्कृत साहित्य भारतीयों के जीवन–मूल्यों का आधर है। संस्कृत साहित्य में जीवन के शाश्वत सिद्धान्तों, जीवन–मूल्यों की इस परम्परा में आचार्यविजय गद्य काव्य का नाम प्रमुखता से लिया जा सकता है।

गोस्वामी हरिकृष्ण शास्त्री द्वारा रचित ''आचार्यविजय'' गद्यकाव्य, आधुनिकसंस्कृत साहित्य की समृद्ध परंपरा में उल्लेखनीय कृति है। इसमें 59 परिच्छेद है। वैष्णव भक्ति के प्रमुख आचार्यों में हुए रामभक्ति के प्रवर्तक तथा उँच–नीच और जात–पात के भेदभाव के बिना जन–जन तक भक्ति की सरिता को पहुँचाने वाले जगद्गुरु रामानन्दाचार्य का सम्पूर्ण जीवन, उनके सिद्धांत, दर्शन, संदेश इत्यादि अर्थात् सम्पूर्ण जीवन–चरित प्रकृत गद्यकाव्य का प्रतिपाद्य विषय है। आचार्यविजय काव्य में हरिकृष्ण शास्त्री ने काव्य के नायक रामानन्द तथा अन्य पात्रों के माध्यम से काव्य में अनेक स्थलों पर मनुष्य के जीवनाधार भूत जीवन मूल्यों को दर्शाया है :–

रामानन्द को जब उनके पिता राघवानन्दाचार्य के आश्रम में शिक्षा दिलाने हेतु जाते है तब वह रामानन्द को समझाते हुए कहते है कि'' मन, वचन और कर्म से गुरु सेवा में तत्पर होकर पूर्ण मनोयोग से विद्याध्ययन करना। स्वप्न में भी कभी गुरुजी की आज्ञा का उल्लंघन न करना। शील का परित्याग न करना, प्रमाद और उद्दण्डता से दूर रहना। गुरु सेवा ही तुम्हारे कल्याण एवं सुख का साध्न बनेगी। उनकी कृपा में ही अपना हित मानना।''

> स्वपनेपि गुरोराज्ञोल्लङ्घनम्। न वा क्वचन शालीयनियमव्याहतिः, मास्पृशत्
> व्यामोहः, मा गच्छत् कदाचन प्रमादः। (आर्चाविजय – हरिकृष्ण शास्त्री, पृ. 110 चतुर्दश परिच्छेदः।)

बालक रामानन्द को उनके पिता पुण्य सदन द्वारा दिया यह संदेश वर्तमान में छात्रों के लिए आवश्यक है जिससे वह सदाचारी मर्यादित सुसंस्वृफत सभ्य आचरण को अपने छात्रा जीवन में धरण कर सवेंफ।

रामानन्दाचार्य एक बार मार्ग में जाते हुए देखते है कि महिषासुर मर्दिनी सकल सिद्धि प्रदात्री चामुण्डा देवी के मंदिर का शरत्कालीन महापूजा महोत्सव चल रहा था। वहाँ पर बलि चढ़ाने के लिए अनेक पशु बँध् हुए थे। बलि के नाम पर व्यर्थ में ही मूक प्राणियों की हत्या रूपी कर्म को सुनकर 'अहिंसा परमोर्ध्मः एवं मा हिंस्याः सर्वभूतानि' इस सिद्धान्त के समर्थक परम कारुणिक श्री रामानन्द गर्जते हुए बोले – क्या जगदम्बा केवल बोलने वाले प्राणियों की माता है, मौन, मूक प्राणियों की नहीं। यदि यह सम्पूर्ण सृष्टि उन्हीं से उत्पन्न है तो फिर पशु भी उन्हीं से उत्पन्न उन्हीं के पुत्रा हैं। तो पिफर वह माँ अपने ही भोले–भाले मौन रहने वाले पुत्रों का वध कराकर टुकड़े–टुकड़े काटकर खाने में केसे प्रसन्नता को प्राप्त करेगी? उनके वचन सुनकर हिंसकों के हाथ से तलवारें अपने आप नीचे गिर गई। आचार्य के उपदेश से उन्हें ज्ञान की प्राप्ति हो गई औरवे स्वयं इस क्रूर कर्म से विरत हो गए।

एक बार दिल्ली सम्राट बादशाह श्री बहलोल लोदी के सैनिक श्रीमठ में स्वामी रामानन्द के पास आते है और उनसे निवेदन करते है कि ''हमारे सम्राट के सिर में भयंकर वेदना हो रही है, बड़े–बड़े वैद्य एवं मुस्लिम, डॉक्टर भी बादशाह की शिरोवेदना दूर नहीं कर पाएं। इसलिए आपका तपः प्रभाव और विश्वविश्रुत पवन यशोगाथा को सुनकर विनयपूर्वक आपके पास भेजा है ताकि आप उनकी दिल्ली आकर इस व्यथा को दूर कर सकें। सम्राट के सैनिकों ने अति महँगे मूल्यों वाली चमचमाती किरणों वाली माणिक्य, पन्ना, हीरा, मोती आदि से भरे हुए सुवर्ण–चाँदी के पात्रा स्वामी जी के चरणों में रख दिए। परंतु स्वामी ने उन्हें लेने से इंकार करते हुए कहा कि हम तो विरक्त संन्यासी है, अतः बहुमूल्य रत्नराशि से हम लोगों को क्या प्रयोजन? इन सबको लौटा ले जाओ अथवा अनेक याचक, पाचक, दीन–हीन ब्राह्मणों, अनाथों, दिव्यांगों को दे दो। हमारे लिए तो यह व्यर्थ ही है। सैनिकों के निराश होने पर स्वामी जी कहते है कि वे अपने मठ से ही सम्राट की शिरोवेदना का उपचार कर देंगे तथा जब वे सब दिल्ली पहुँचेंगे तो अपने बादशाह को हासोल्लासपूर्वक क्रीड़ा करते हुए पाएगें। बादशाह स्वामी के इस कृत्य से प्रभावित होते है तथा लौटाई हुई उस रत्नराशि को देखकर स्वामी जी की त्यागवृत्ति की भूरि–भूरि प्रशंसा करते है तथा अपने गुरु तकी को बुलाकर उससे भी दुगनी रत्नराशि और अनेक आभरणों को देकर कहते है कि वह परमगुरु महात्मा श्री स्वामी रामानन्द को दिल्ली ले आएं। तकी स्वामी जी से बहुत ईर्ष्या करते है तथा बादशाह का विशेष आकर्षण देखकर और भी उसका हृदय जल उठा। काशी में जाकर उसने स्वामी से अपने कुछ प्रश्न रखे तथा उनका सम्यवफ समाधन पाने पर स्वामी के सामने नतमस्तक हो जाते है, तथा बादशाह द्वारा भेजी गई रत्नराशि स्वामी जी के सामने रखवाते है, परन्तु स्वामी जी फिर वही उत्तर देते है जो उन्होंने सैनिकों को दिया था कि यह रत्नराशि हमारे लिए व्यर्थ है। इसे ले जावें या फिर दीन–हीनों में बाँट दे। तथा दिल्ली आने के लिए समय का अभाव है, अतः फिर कभी आएंगे। यहीं रहकर यहीं से प्रतिदिन बादशाह की शुभकामना करता हूँ, आप में सदा सद्भावनाएँ उल्लसित हों, आपकी धर्म में रति हो। यह अमृतपूर्ण वाणी सुनकर तकी मुहम्मद श्रद्धापूर्वक स्वामी जी के चरणों में प्रणाम करके दिल्ली चला जाता है तथा बादशाह के समीप पहुँचकर स्वामी जी के वैदुष्य, शीलस्नेहमयस्वभाव, माधुर्य पूर्ण वाक्शैली, त्याग और संतोष का हृदय से बहुत प्रशंसा करता है।

स्वामी रामानन्द के इस त्याग से आज का समाज प्रेरणा प्राप्त कर सकता है। आज मनुष्य धन प्राप्ति के लिए कुछ भी सही–गलत तरीके अपनाते है। संतोषी प्रवृत्ति तो जैसे आज के मानव में है ही नहीं। उसे सब कुछ जल्दी चाहिए फिर चाहे वह किसी भी कीमत पर क्यों न मिले। रामानन्दाचार्य जब अपना लौकिक शरीर त्याग कर भगवान के श्री चरणों की सन्निधि प्राप्त करना चाहते है तब अपने शिष्यों एवं भक्तजनों को बुलाकर उपदेश देते है। उनका यह उपदेश मनुष्य अपने जीवन में ग्रहण करें तब उसका चहुँमुखी विकास हो सकता है। उनका उपदेश इस प्रकार है :–

> भवन्तः सततं स्वकीयं सन्मार्गं सेवमानाः कदापि न सत्पथाद्विचलिता भवन्तु।
> सर्वदा सत्यं, कदापि न विजहतु रूद्यपि सत्ये सन्ति भूयांसि
> सङ्कटाऽऽपन्नकृत्यानि किन्त्वन्ते तु विजय एव भवति सत्यव्रतस्येति।

आप लोग सन्मार्ग का सेवन करते हुए कदापि सन्मार्ग से विचलित न हों सर्वदा सत्य बोले कभी भी सत्य न छोड़े, यद्यपि सत्य पालन में अनेकों संकट से युक्त कृत्य होते हैं किन्तु अन्त में विजय सत्यव्रती की होती है।

धर्ममयं कल्पादपं सर्वदैव सत्कर्वारिधराभिः सिञ्चयन्त एव तिष्ठन्तु स तु
सांसारिकतापत्रयात् सर्वात्मशान्तिसौख्यसम्पादिनीं स्वच्छछायामेव सम्पादयति।

धर्ममय कल्पवृक्ष को हमेशा ही अपने सत्कर्म रूपी जल धराओं से सींचते रहे। सांसारिक त्रिविध तापों से सर्वात्मशान्ति एवं सुख सम्पादन करने वाली स्वच्छ शीतल छाया यही धर्मरूपी वृक्ष ही सम्पादित करता है।

भक्तिमयीं कामध्नुञ्च सर्वात्मभावेन सेवध्वम्, रक्षतेति। यतो हि मोक्षमयं
नवनीतम् अस्या भावनामयपयो लाभादेव लब्धुं शक्यते। एषा भक्तिकामध्नुरेव कामान् धिनोति।

भक्तिमयीकाम धेनु को ही सर्वात्मभाव से सेवन करो उसकी रक्षा करो, क्योंकि इसी के भावनामय दुग्ध के लाभ से ही मोक्ष रूप नवनीत प्राप्त कर सकते हो। यह भक्तिरूपी कामधेनु ही कामों को पूर्ण करती है।

काञ्चन सदृक्षकान्तकलेवरासु कामिनीषु, काञ्चने{पि च न क्वचन
समासक्ताः भवेयुः, स्पर्शदोषतोऽपि दूर एव तिष्ठन्तु। यतो हि कामिनीमयीं
मोहयामिनीं विलोक्य, धर्माम्भोजं सुविकसितमपि सद्यो मुवुफलितं भवति।
एवमेव काञ्चनबलविशेषं प्राप्य कलियुगधर्मः प्राबल्यं वहन् वैराग्यं
श्रीविरहितं कलयति। अतो विशेषतो{वध्येयमेतत् यत् कामिनी–काञ्चनसंसर्गोऽपि न स्पृशेत्।

सुवर्ण जैसे सुन्दर शरीर वाली स्त्रियों में और सोने में कभी भी आसक्त मत होना उनके स्पर्श दोष से भी दूर ही रहना क्योंकि स्त्री रूपी मोहरात्रि को देखकर धर्म रूपी कमल खिला हुआ भी तत्काल मुरझाकर बन्द हो जाता है। इसी प्रकार सोना रूपी विशेष बल को प्राप्त करके कलियुग धर्म प्रबल होकर वैराग्य को श्रीहीन कर देता है, अतः विशेष रूप से ध्यान रखना चाहिए कि कञ्चन और कामिनी का संसर्ग भी न स्पर्श करे।

स्वाश्रमोपरि समायातान् दीनान् दुःखितान् अभ्यागतान् दुर्बलान् न क्वचन
तिरस्कुर्युः प्रत्युत मधुरवचनरसझरीभिराप्याययेयुः स्वाश्रयदानेन भोजनादिभिश्च
सम्मानयेयुः। एषैव लोकसेवा सत्या वा साधुसेवा समाजसेवा लोकशोकविमोककारिणी।

अपने आश्रम में आये हुए दीन दुःखी, अभ्यागत और दुर्बलों का कभी भी तिरस्कार नहीं करना चाहिए बल्कि मधुर वचन रस की झरी से उन्हें प्रसन्न कर देना आप लोगो का कर्तव्य होना चाहिए। अपना आश्रय प्रदान करके और भोजनादि से उनको सम्मानित कर देना, लोगों के शोक को दूर करना ही वास्तव में यही सत्य सेवा, समाजसेवा अथवा लोक सेवा है।

यदि क श्चनाज्ञो विज्ञो वा स्वावमानमपि कुर्यात् न सः प्रति–वचनीयः न
तदुपरि क्रोधं प्रकटयेयुः। क्रोधौ हि नाशहेतुः, निरयदायी च भवति।

यदि कोई बुद्धिमान अथवा अज्ञ अपना अपमान भी कर दे तो उसका प्रतिवाद तथा उसके उपर क्रोध नहीं करना चाहिए क्योंकि क्रोध नाश का कारण एवं नरक प्रदान करने वाला है।

सकलप्राणिषु दयामेव विदध्युः। दया हि धर्ममूलमेव।

सभी प्राणियों पर दया करना ही सभी धर्मों का मूल है। यह सदैव स्मरण रखना चाहिए। इस प्रकार रामानंदाचार्य का जीवन एक सच्चे संन्यासी का आदर्श रूप प्रस्तुत करता है। सच्चा संन्यासी कष्ट–परायण एवं निर्लोभी होता है। उन्होंने अपने जीवन में सदैव सदाचरण को महत्व दिया। बहलोल लोदी भी उनके इन्हीं गुणों से प्रभावित हुआ था। इस प्रकार जीवन मूल्यों के अनेक प्रसंग आचार्यविजय काव्य में प्राप्त होते है।

आज वैश्वीकरण के इस युग में मूल्य आधरित शिक्षा की बहुत आवश्यकता हैं। आज साम्प्रदायिकता, जातिवाद, हिंसा, असहिष्णुता, चोरी–हत्या आदि की बढ़ती प्रवृति समाज में मूल्यों के ह्रास का ही परिणाम है। इसलिए आज के वर्तमान युग में आवश्यक हैं कि लोग अपने जीवन में सच्चाई, ईमानदारी, सहनशीलता, नैतिकता इत्यादि मूल्यों को अपने जीवन में अपनाए ताकि एक सभ्य एवं सुसंस्कृत देश का निर्माण हो सके।

इस प्रकार हरिकृष्ण शास्त्रीी के आचार्यविजय काव्य में नायक रामानंद तथा अन्य पात्रों द्वारा जीवन मूल्यों को अपने जीवन में ग्रहण करने का आदर्श प्रस्तुत करते है।

संदर्भ ग्रंथ

1. आचार्यविजय काव्य – हरिकृष्ण शास्त्री, हंसा प्रकाशन, सीकर, राजस्थान, 2011.
2. काव्यप्रकाश – आचार्य मम्मट, चौखम्भा प्रकाशन, नई दिल्ली।